सारो जगु पचे, थो अविद्या जे अहंकार में,
जिएं बांदरु बाजीगर जे, हथ में नितु नचे,
विरिले कंहिं गुरमुख खे, वेई सांति अचे,
जंहिं खे संत सचे, सामी लायो लख में.

अविद्या के कारण निर्मित अहंकार के संबंध में सामीजी का कहना है कि यह सारा संसार अविद्या के अहंकार में जल रहा है। जैसे कोई बाजीगर/मदारी अपने हाथों से बंदर को सदा नचाता रहता है, उसी प्रकार अविद्या भी मनुष्य को नित्य ही नचाती रहती है। ऐसे जीव भीतर से अशांत होते हैं। किन्तु किसी विरले गुरुमुख को आंतरिक शांति और सुख का अनुभव होता है, जिसे किसी सच्चे संत ने (सतगुरु) ईश्वरीय ज्ञान प्रदान किया है।

अध्यात्म के क्षेत्र में परमात्मा जीव और जगत के परस्पर संबंध के बारे में अज्ञान को 'अविद्या' कहते हैं। किसी वस्तु के स्वरूप को ढँकने वाली शक्ति का नाम अविद्या है। अविद्या के दो कार्य हैं (1) आवरण (2) विक्षेप। आवरण का अर्थ है आत्म-स्वरूप के ऊपर परदा डालना। विक्षेप का अर्थ है आत्म-स्वरूप पर अन्य किसी वस्तु का आरोप करना। जीव/मनुष्य में अविद्या होती है। ब्रह्म/परमेश्वर तो एक ही सत्य वस्तु है किन्तु अविद्या के कारण मनुष्य की ओर से अनेक नाम-रूपों का आरोप किया जाता है। ये नाम रूप ही माया है। अविद्या के कारण ही ईश्वर जीव, जड़ पदार्थों आदि के रूप में भासमान होता है।

अविद्या के कारण से ही मोह, मान, राग, द्वेष, संशय और अहंकार आदि सब बाँधने वाले बंधन, मनुष्य को बहुत पीड़ित करते हैं। सामीजी ने इसी अविद्या के अहंकार की बात कही है, जिसके कारण सारा जगत् अंदर से जल रहा है, दु:खी हो रहा है। इसी अविद्या के चुँगल में फँसा हुआ मनुष्य अविद्या के इशारे पर नाच रहा है, व्यवहार कर रहा है। मनुष्य से सभी प्रकार के कृत्य कराने वाली अविद्या ही है। शुद्ध भक्ति अथवा नाम-स्मरण आदि द्वारा अविद्या/माया के इन बंधनों को पहचानकर छोड़ने के लिए उत्साहित होना और अंत में अविद्या रूपी बंधन को भी छोड़ देना, यही मुक्ति रूप परम-पद की प्राप्ति है। इन्हीं बंधनों से बंधा हुआ जीव 'बद्ध' कहा जाता है और इन्हीं से छूट जाने पर 'मुक्त' कहा जाता है। इस मुक्ति के लिए सच्चे संत/सतगुरु की नितांत आवश्यकता है।

■